वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

ग्रामीण जीवन का वैभव और शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

सपना सिंह
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ.प्र.

शोध-सारांश – भारत मुख्यतः गाँवों का देश है, देश में ग्रामीण जनसमुदाय भारतीय समाज का केन्द्र बिन्दु है और यह वास्तविक भारत का प्रतिनिधित्व भी करता है। भारतीयों का ग्रामीण जीवन अपने भीतर विलक्षण जीवन्तता लिए होता है, यही इस जीवन को वैभवपूर्ण बनाता है। समकालीन कहानीकारों ने गाँवों के इन्हीं मूल्यों को आधार बनाकर महत्त्वपूर्ण कहानियाँ लिखी हैं। प्रेस्टिज इण्टर कॉलेज देवरिया के प्राचार्य शिव नारायण सिंह जी इनमें अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनकी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन का विलक्षण वैभव स्पष्ट दिखाई देता है। वह ग्रामीण जीवन के चिरन्तन मूल्यों से लेकर संघर्ष व उससे मिलने वाली जीवटता तक का जिक्र अपनी बोधकथाओं में करना नहीं भूलते। इस सन्दर्भ में शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ ग्रामीण फलक पर सर्वस्पर्शी दिखाई पड़ती हैं।

प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से हम हिन्दी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के चित्रण की चर्चा करते हुए शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के चित्रण की व्याख्या करने का प्रयास करेंगे तथा शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में व्याप्त ग्रामीण जीवन के मूल्यबोध व वैभव को भी समझने का प्रयास करेंगे।

बीज-शब्द– ग्रामीण, सरलता, सहजता, बोधकथा, ध्येय, नैतिक, जीवन, व्यवस्था

गाँव भारतीय सभ्यता का आधार है। वैदिक काल से लेकर अब तक गाँव परम्परा, संस्कृति, मूल्य व्यवस्था, अर्थव्यवस्था का स्रोत रहा है। अंग्रेजों के आगमन और आधुनिक प्रौद्योगिकी ने गाँव को उतना नहीं बदला है जितना कि शहरों को बदला है। इसलिए जब यह कहा जाता है कि भारत की आत्मा गाँव में बसती है तो यह अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं जान पड़ता।

ग्रामीण जीवन की अवधारणा समय के साथ बदलती रही है। इस बदलाव के बावजूद भी गाँव की अपनी विशिष्ट पहचान धूमिल नहीं हुई है बल्कि गाँव की छवि अभी भी सुरक्षित है। भूमण्डलीकरण और मुक्त बाजार के दौर में भी ग्रामीण जीवन ने सभ्यता का मार्गदर्शन किया है। ग्रामीण जीवन की समाजशास्त्रीय, कृषि वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञों और साहित्यकारों ने अपनी-अपनी दृष्टि से ग्रामीण जीवन को परिभाषित किया है। गाँव की अवधारणा को किसी एक अनुशासन की परिभाषा में बाँधा नहीं जा सकता है। अपनी बहुआयामी एवं बहुस्पर्शी चरित्र के कारण ग्रामीण जीवन की अवधारणा प्रसांगिक रही है।

हिन्दी कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन को लेकर कई कहानियाँ रची गई। इन बोधकथाओं के द्वारा ग्रामीण जीवन परम्परा का पता चलता है। दरअसल कहानी की शुरुआत भी कविता और नाटक की तरह लोक- कला से हुई। इसे किस्सागोई की परम्परा से सम्बन्धित मानते हैं। आज भी ग्रामीण जीवन में किस्सागोई की परम्परा मौजूद है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि प्रेस्टिज इण्टर कॉलेज के प्राचार्य शिव नारायण सिंह जी भी मूलतः एक किस्सागो ही हैं, उनका यही गुण उनकी रचनाओं को विशिष्ट बनाता है।

किस्सागोई में प्रायः वैसे कथ्य होते हैं जिसमें कल्पना की उड़ान ज्यादा होती है और उसी से आनन्दित भी होते हैं। इसके विस्तार फलक को नामवर सिंह ने 'कहानी और फैंटेसी' में कहानी को कल्पना से जोड़कर देखने का प्रयास किया है। नामवर सिंह का मानना है कि "वैसे भी कहानी के साथ अनेक प्रकार की कलाएँ दिखाती हैं। कभी वर्षों को समेटकर एक क्षण में बाँध देती है, कभी क्षण को खोलकर वर्षों में फैला देती है, कभी समय के दायरे को तोड़ती है, कभी टुकड़ों को जोड़कर एक दायरा बनाती है। कहानी का

एक वाक्य एक राजा था... शुरू हुआ कि नहीं यह एक 'था' मन को उठाकर जाने कहाँ कितनी दूर लेकर उड़ जाता है। कहानी बिना पर के उड़ती है और शुरू-शुरू में इसी गुण के कारण हमें पंसद आती है।"1

फ्रैंक ओ कोन्नोर ने कहानी की विशेषता बताते हुए कहा कि कहानी, कविता और नाटक की अपेक्षा अपनी रूचि के अच्छे तरीके प्रस्तुत करती है। फ्रैंक ओ कोन्नोर के मत में- "प्रारम्भिक दौर में कविता और नाटक की तरह कहानी भी एक लोक- कला थी, हालांकि अपनी सीधी- सादी तकनीक के कारण कविता और नाटक की तुलना में यह महत्त्वपूर्ण नहीं थी। लेकिन उपन्यास की भाँति कहानी भी एक आधुनिक कला के रूप में विद्यमान है, अर्थात् जीवन के प्रति हमारे निजी रुझान को यह कविता और नाटक की अपेक्षा अधिक अच्छे ढंग से पेश करती है।"2

कहानी अपने रूप में एक वैसी विद्या है जो किसी एक भाव या घटनाओं को प्रस्तुत करता है। इसको परिभाषित करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है- "कहानी एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा-विन्यास सभी एक भाव को पुष्ट करते हैं।"3

इसके आगे प्रेमचंद कहानी की तुलना उपन्यास से करते हुए लिखते हैं कि "उपन्यास की भाँति कहानी में मानव का एक सम्पूर्ण वृहत् रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता न उसमें उपन्यास की भाँति सभी रसों का मिश्रण होता है, वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल, बेल-बूटे सजे हुए हैं, बल्कि वह एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"4

उपन्यास जहाँ जीवन की सम्पूर्णता से लेखक का सरोकार है वहाँ कहानी के कोई एक भाव, घटना या चरित्र का कोई मार्मिक प्रसंग होता है। जे. वर्ग इसेंविन ने कहानी को परिभाषित करते हुए इस बात को स्वीकार किया है कि कहानी एक प्रधान घटना एवं एक कथा वस्तु का सूक्ष्म संगठित रूप होता है जो कि पाठकों पर एक निश्चित प्रभाव छोड़ता है। जे. वर्ग इसेंविन के विचार इस प्रकार है- "कहानी एक संक्षिप्त कसावपूर्ण कल्पना प्रसूत विवरण है जिसमें एक घटना होती है और एक प्रमुख पात्र होता है। इसमें एक कथावस्तु होती हैं जिसका विवरण इतना सूक्ष्म तथा निरूपण इतना संगठित होता है कि वह पाठकों पर एक निश्चित प्रभाव छोड़ता है।"5

इस तरह कहानी की कई विशिष्टताएँ उभर कर समाने आती है जिसमें एक प्रधान घटना, एक प्रमुख चरित्र, कल्पना, कथावस्तु कसाव, पाठकों पर प्रभाव डालने में समर्थ है।

हिन्दी साहित्य में सामान्यतः मूल रूप से 'ग्रामीण कहानी' और 'आंचलिक कहानी' का आरम्भ स्वतंत्रता के बाद से माना जाता है। इस सम्बन्ध में विद्वान श्यामसुन्दर के अनुसार- "विविध शब्द कोशों में 'ग्रामीण' का अर्थ देहाती 'गाँव' में रहने वाला, गाँव सम्बन्धी आदि है तथा इनसे जुड़ी कहानियाँ भी ग्रामीण अंचल की हैं।"6

ग्रामीण बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन के विभिन्न अंगों का चित्रण होता है। 'ग्रामीण-जीवन' की अनुभूति ही ग्रामीण बोधकथाओं में अभिव्यक्त होती है, जिसमें गाँव की जीवन पद्धति, वहाँ की प्रथाएँ, वहाँ की स्वच्छ प्रकृति, वहाँ की परम्परा और संस्कृति, प्रादेशिक विशेषताएँ भौगोलिक विशेष के अनुसार धार्मिक और उससे जुड़ी विभिन्न समस्याएँ आदि ग्रामीण कहानी में समाहित होती हैं।आलोचक आनन्द यादव के अनुसार "अनेक पहलुओं से ग्रामीणत्व उभर आता है और जब अनुभूति के अनिवार्य अंग के रूप में ही 'ग्रामीणता' कहानी में प्रतिबिम्बित होती हैं तब वह कहानी ग्रामीण कहानी बनती है।"7

इस प्रकार लोकगीत, लोकभाषा, वेश-भूषा, आस्थाएँ, परम्पराएँ और सांस्कृतिक मर्यादाएँ, आदि बातों के माध्यम से ग्रामीण कहानी पर ग्रामीण परिवेश का प्रभाव दिखाई पड़ता है, 'ग्रामीण कहानी' की विशेषता और उसके अर्थ को सामने लाने के लिए उसकी सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं को सर्वप्रथम जानना अति आवश्यक है। शिव नारायण सिंह जी की विशेषता इन सभी विषयों को लेकर उनका सहज ज्ञान ही है। इसी व्यावहारिक विशेषज्ञता के कारण शिव नारायण सिंह के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन का अद्‌भुत वैभव हमें देखने को मिलता है, जिसकी चर्चा यहाँ यथेष्ठ है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन– पीछे चर्चा हो ही चुकी है कि, शिव नारायण

सिंह मूल रूप से एक किस्सागो हैं, किस्सागोई की यह शैली उनकी बोधकथाओं को एक अतिरिक्त प्रासंगिकता देने का कार्य करती है। शिव नारायण सिंह भारतीय ग्रामांचल के एक जीवन्त नागरिक भी हैं, इस नाते उनकी बोधकथाओं में यत्र- तत्र- सर्वत्र यह ग्रामांचल बिखरा हुआ है और बिखरा हुआ है इस ग्रामांचल का वैभव।

शिव नारायण सिंह अपनी कथाओं में वास्तविक जीवनानुभवों का भी प्रयोग कर ग्रामीण जीवन की सहजता सरलता का परिचय देने का कार्य करते हैं, उदाहरण के लिए 'कुटिल' बोधकथा में वह कहते हैं:- "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता उन दिनों की है, जब मैं अपने गाँव से, मेरा गाँव कहाँ है ? भटनी। भटनी से देवरिया ट्रेन से आया जाया करता था। प्रतिदिन टिकट खरीदिए या फिर एम.एस.टी. बनवा लें, स्वाभाविक है एम.एस.टी. बेहतर विकल्प है। एम.एस.टी. मतलव मंथली सीजनल टिकट। वैसे ही इस धरती पर लाइन लगाने की परम्परा अपरिहार्य हो गई है। अब इस परम्परा में जाने कितने लोग अपना बहुमूल्य समय नष्ट कर देते हैं। इसका विकल्प भी क्या है ? और है तो सभी की पहुँच में कहाँ।

वैसे तो हम लोग लोकल ट्रेन पकड़ने के लिए आते। किन्तु बहुधा कोई-न-कोई एक्सप्रेस ट्रेन मिल जाती और अगला स्टॉपेज देवरिया सदर होता। इस बीच प्रतिदिन कोई न कोई अजूबा, कुछ-न-कुछ नया देखने, सुनने और सीखने को मिलता।

ऐसे ही एक दिन मैं और मेरे सहयात्री अर्थात् जो प्रतिदिन भटनी से देवरिया और देवरिया से भटनी आया जाया करते। उनका अपना उद्देश्य होता मेरा अपना उद्देश्य। मेरे उद्देश्य से आप परिचित है। उन दिनों मैं बी.आर.डी.पी.जी. कालेज में बी.एड. की पढ़ाई कर रहा था।

उस दिन वह एक्सप्रेस ट्रेन थी। ट्रेन खुलती तब तक दो व्यक्ति हमारे ही कंपार्टमेंट में आये जो पसीने से तरबतर थे। एक बात बता दूँ, उन दिनों या आज भी जो लोग प्लेटफार्म पर टहलते रहते हैं और ट्रेन खुलने का इंतजार करते हैं। वे देखते रहते हैं कि टी.टी.ई. किस कंपार्टमेंट में चढ़ते हैं। उनसे एक- दो कंपार्टमेंट छोड़कर ट्रेन में चढ़ते। ताकि टी.टी.ई. को उन तक पहुँचते-पहुँचते दूसरा स्टेशन आ जाये। हालाँकि सभी डिब्बे एक-दूसरे से कनेक्ट होते हैं। कुछ अन्य लोग भी चढ़े जो हमारे ही कंपार्टमेंट में आकर बैठ गए।"8

आगे इसी बोधकथा में शिव नारायण सिंह ग्रामीण जीवन की सहजता और आधुनिक जीवन के खोखलेपन की टीस लिए कहते हैं। "उन दिनों अभी सभ्यता थोड़ी शेष थी। आज का जमाना होता तो सभी अपने-अपने मोबाइल में व्यस्त। कौन आया, कौन गया, कौन बैठा, कौन खड़ा है ? इससे क्या मतलब ? एक दूसरे से सौहार्द पूर्व शिष्टाचार वार्ता प्रारम्भ हुई। पहले से बैठे दोनों व्यक्तियों में से एक ने बाद में आए व्यक्तियों से कहा- जान निकल गई। लाइन में लगे लगे, तब जाकर दो टिकट मिल पाया।"9

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं में ग्रामीण जीवन की सहजता के साथ-साथ, संघर्ष का चित्रण करना भी नहीं भूलते। उनकी कथा की एक विशेषता यह भी है कि वह सिक्के का सिर्फ एक ही पहलू दिखाकर श्रोता एवं पाठक को प्रसन्न नहीं कर देना चाहते वह उसे चिंतन की गहराइयों में भी उतार लाते हैं। उदाहरण के लिए 'अप्प दीपो भव' कहानी में वह चिकित्सा आदि व्यक्तिगत आवश्यकताओं के प्रति ग्रामीण व्यक्ति के अभावजनित संकोच तथा अज्ञान को दिखाते हुए कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, आज की बात है पुरानी लेकिन सत्य घटना है और मेरे बहुत करीब के रिश्तेदार की है। घटना इस प्रकार है, उस घर के मुखिया उम्र के इस दौर में अन्धे हो चले हैं। आप जानते ही हैं कि जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, एक स्टेज आता है जब आँखों की रोशनी घटते-घटते एकदम समाप्त हो जाती है।

ऐसा ही कुछ उनके साथ भी था, जब थोड़ा-बहुत दिखायी देता था, उनका काम चल जाता था तो उन्होंने ध्यान नहीं दिया। जब उम्र अधिक हो गयी है तो उन्हें बिल्कुल नहीं दिखायी दे रहा है। इस अन्धेपन का कारण भी है। आँख में कौन-सी बीमारी होती है ? मोतियाबिन्द । तो उनकी आँख में मोतियाबिन्द हो गया है। सभी घरवाले उन्हें समझाते हैं। उनके हित-मित्र समझाते हैं। उनके दोस्त कुछ डाक्टर भी हैं। वे भी समझाते हैं कि आप इसका इलाज करा लीजिए, आप इसका आपरेशन करा लीजिए, आपका मोतियाबिन्द पक गया है, निकाल दिया जायेगा फिर आँख की रोशनी लौट आयेगी। आप सब कुछ ठीक-ठीक देख लेंगे। आपकी आँख सही हो जायेगी। वे मानते नहीं हैं।

मैंने कहा आपसे, वे मानते नहीं हैं। उनका

कहना है कि अब इस इलाज का क्या फायदा, मैंने तो पूरे जीवन में कभी एक टेबलेट भी नहीं खायी है। दवाई के नाम पर मैंने ऐसा कुछ भी नहीं खाया। मुझे कभी सर्दी नहीं हुई, मुझे कभी बुखार नहीं हुआ, मुझे कभी किसी तरह की कोई बीमारी नहीं हुई और जब मेरी उम्र पूरी हो गयी है, जब जीवन के मुश्किल से कुछ वर्ष रह गये हैं, तो फिर इस चीर-फाड़ का क्या मतलब, इस चीर-फाड़ की क्या जरूरत है ?

वैसे भी मुझे कमी किस बात की है जो मैं इस सांसत में पड़ूँ । मैं अन्धा ही सही, मुझे कुछ दिखाई नहीं पड़ता है लेकिन ऐसा भी नहीं है जिससे मेरा कोई काम रूका हो। मेरे सारे कार्य सकुशल सम्पन्न हो रहे हैं। मैं सुखी हूँ, मैं प्रसन्न हूँ, मुझे किसी तरह की कोई दिक्कत नहीं है। आप ही बताइये कि उम्र के इस दौर में आपरेशन का क्या मतलब है, इस जलालत का क्या औचित्य है, इस कठिनाई का क्या अर्थ है।"10

इसी कहानी में कितने अद्‌भुत ढंग से शिव नारायण सिंह ग्रामीण जीवन में परिवार का एक दूसरे के प्रति गहरे लगाव को दिखाते हुए कहते हैं –

"वे कहते हैं, मेरी दो आँखें ही अन्धी हुई है। मेरे पास आखों की कमी ही कहाँ है। मेरी पत्नी के पास दो आँखें है, मेरे चार बेटे-बेटियाँ हैं, जो शादी-शुदा हैं अर्थात दो बहुएँ और दो दामाद भी हैं। कुल कितनी आँखें हो गयीं, सोलह। फिर उन्होंने कहा, भगवान की बड़ी कृपा है मुझ पर कि मेरे उन बेटे-बेटियों के भी दो-दो बच्चे हैं।

अब कितनी आँखें हो गयीं ? चार दुनी आठ, आठ दुनी सोलह। पत्नी की भी दो आँखें है, बेटे, बहू, बेटी, दामाद मिलकर सोलह आँखें है और उनके भी दो-दो बच्चे हैं, कुल आठ अर्थात उनकी भी सोलह आँखे हैं। वे कहते हैं, हम सभी एक ही साथ रहते हैं।

अब बताइए, मेरी दो आँखें नहीं है तो क्या हो गया, मेरे घर में तो कुल चौंतीस आँखें हैं। कुल कितनी आँखें हो गयीं सोलह और सोलह, बत्तीस और दो, चौंतीस आँखें हैं। ठीक ही कहा उन्होंने, मेरे घर में तो चौतीस आँखें हैं। दो आँखें और होती तो छत्तीस हो जाती लेकिन उनका बहुत मतलब नहीं है। मेरा सारा कार्य इन चौंतीस आँखों से हो ही जाता है। इसलिए मुझे अपनी आँखों की जरूरत नहीं है।"11

ग्रामीण जीवन की चर्चा करते हुए शिव नारायण सिंह गाँव में एक दूसरे की परस्पर सहायता करने के भाव को उल्लेखित तो करते ही हैं, साथ-ही-साथ बड़ी ही सहजता से पलायन और उसके साथ आने वाली चुनौतियों को भी बहुत सुरुचिपूर्ण ढंग से उल्लेखित करते हैं, इसी प्रकार "रुई का पहाड़" कहानी में आप कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, बात मेरे ही गाँव की है। यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर मेरा गाँव है। मेरे गाँव में धुनिया का एक परिवार रहता है। वह हमारा पुस्तैनी धुनिया है और उस परिवार का जो मुखिया है, सभी उसे हनीफ कहते। धुनिया आप समझते हैं, जो रूई धूनने का काम करता है। उस धुनिया के परिवार की परवरिश की जिम्मेदारी उसके बड़े बेटे पर है। कारण, पिता बूढ़ा हो चला है, अब उसके वश का नहीं है कि वह कुछ कर सके। किसी परिवार में जिम्मेदारी को आगे बढ़ाने का जो तरीका है वह यही है कि जो दूसरे नम्बर का होता है या घर में अगले जनरेशन में जो बड़ा होता है उसे जिम्मेदारी मिल जाती है।

यह लड़का जो उस धुनिया का बड़ा बेटा है, वह बहुत पढ़ा-लिखा नहीं है और जब कम पढ़ा-लिखा है, तो मजबूरी है कि करेगा क्या ? क्योंकि उसे नौकरी मिलनी नहीं है। अतः वह भी अपना पैतृक व्यवसाय ही चुनता है। उसका पैतृक व्यवसाय आप समझ ही रहे हैं, रूई धुनने का है। लेकिन घर की आर्थिक हालत इतनी अच्छी नहीं है कि वह अपना व्यवसाय खड़ा कर सके। तब मजदूरी करना उसकी मजबूरी है।

गाँव से ही थोड़ी दूरी पर भटनी बाजार है और उसी बाजार के किसी दुकान से वह थोड़ी रूई लाता है, धुनता है, धुनकर वापस पहुँचा देता है और उससे जो मजदूरी मिलती है, उसी से उसके परिवार का भरण-पोषण होता है, गुजारा होता है, काम चल रहा है।

अब बात कुछ नई घटती है। एक लड़का जो इस धुनिया का बचपन का क्लासमेट है, बचपन में साथ ही पढ़ा-लिखा है, वह बाहर से कमाकर गाँव आया हुआ है। वह उसे सलाह देता है, देखो मैं सूरत में एक कपड़े के मील में काम करता हूँ। तुम मेरा ठाट-बाट देख ही रहे हो, मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे साथ वहाँ चलो। खूब पैसा कमाओ और मेरे जैसे रहो।

चूँकि बात दोस्त की है इसलिए उसे बहुत जल्दी समझ में आ जाती है। अभी यही बात उसका पिता कहता तो उसे समझ में नहीं आती, यह बताने की जरूरत नहीं है। तमाम चीजें आप आपस में समझ लेते

हैं, लेकिन जब हम समझाते हैं, तो वह आपको समझ में नहीं आती है। कुछ ऐसी ही बात वहाँ भी थी। वह लड़का जब उसे समझाता है, तो वह तुरन्त तैयार हो जाता है।

वे दोनों सूरत पहुँचते हैं। जो लड़का उसे सूरत ले गया है, वह उसे सूरत शहर घुमाता है, दिखाता है और उससे पूछता है कि यह जगह कैसी है? अब बताने की जरूरत नहीं है कि सूरत कैसी जगह है। उस धुनिये को वह जगह बहुत पसन्द आती है। वह जहाँ काम करता है वहाँ भी उसे ले जाता है, उसे कपड़े का मिल दिखाता है जहाँ रूई से धागा और धागे से कपड़ा बुनने का कार्य होता है। इस धुनिये को वह जगह भी बहुत पसन्द आती है।

चूँकि उस मिल में रूई से धागा तैयार होता और उस धागे से कपड़ा बुना जाता है, तो ढेर सारी रूई की आवश्यकता होती है और यह सब सामान गोदाम में रखा होता है। वह वाहवाही में अपने मित्र को ले जाता है और रूई का गोदाम दिखाता है। जब वह धुनिया गोदाम में रूई का ढेर देखता है, तो एकाएक बोल पड़ता है, यह तो रूई का पहाड़ है।

गोदाम में जब रूई भरा रहेगा तो पहाड़ जैसा ही दिखाई देगा। धुनिया कहता है यह तो रूई का पहाड़ है। उसका दोस्त कहता है, हाँ-हाँ, यहाँ तो इस तरह के सैकड़ों पहाड़ हैं। तुम यह देखे तो क्या देखे, अभी मैं तुम्हें थोड़ा और आगे ले चलकर इससे भी बड़े-बड़े पहाड़ दिखाऊँगा।

धुनिया कहता है, आखिर इसे कौन धुनेगा ? धुनिया क्या कहता है? इसे कौन धुनेगा ? न बाबा न, मेरे वश का नहीं है। तब क्या होता है, जानते हैं ? बस, वह धुनिया यही कहना शुरू कर देता है, न बाबा न, इसे कौन धुनेगा। उसने रूई का पहाड़ देख लिया, वह कहता है, न बाबा न, मेरे वश का नहीं है, इसे कौन धुनेगा और वह सनक जाता है। वह लड़का जो उस धुनिये को लेकर वहाँ गया हुआ था, उसने तो कुछ और ही सोचा था। उसे क्या पता था कि यह रूई का पहाड़ देखकर सनक जाएगा। अरे, उस धुनिये ने रूई का पहाड़ कभी देखा तो था नहीं, इतनी रूई कभी एक साथ नहीं देखी। वह तो थोड़ी-थोड़ी रूई ले जाता था और धुनता था।

उसे लगा कि यह सब मुझे ही धुनना है और वह सनक गया। अब जो उसे अपने साथ ले गया है वह परेशान है। उसे जगह-जगह ले जाता है. दवा कराता है, इलाज कराता है. लेकिन कोई फायदा नहीं होता। वह बस एक ही रट लगाये रहता कि न बाबा न, कौन धुनेगा; न बाबा न, कौन धुनेगा।"12

आगे जीवन की सरलता को समझाने के लिए शिव नारायण सिंह इसी बोधकथा में कहते हैं- "यहाँ ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति के जिम्मे एक निश्चित कार्य दे रखा है। अब यह उसकी जिम्मेदारी है कि वह उसे कितने ढंग से, कितनी ईमानदारी से, कितने सलीके से, कितनी ऊर्जा से और कितनी उत्कृष्टता से सम्पन्न करता है।

ईश्वर का वास प्रकृति में है, वह प्रकृति स्वरूप है या यूँ कहूँ यह दुनिया ईश्वर की रचना है। यह भी कहा जा सकता है कि जिसकी रचना इतनी सुन्दर तो वह स्वयं कितना सुन्दर होगा ? इस दुनिया को, इस प्रकृति को बनाने के प्रयास में वह जरूर प्रकृतिस्थ हो गया होगा, तभी यह सम्भव हुआ होगा।

प्रकृति केवल पाँच तत्वों से बनी है जो हमारे अन्दर भी है। क्या इस बात को हम नहीं जानते और जानते हैं, तो फिर दोनों में इतना अन्तर क्यों ? मनुष्य को प्रकृति के समीप होना चाहिए, पास जाना चाहिए, प्रकृति में ही रहना चाहिए, प्रकृति में ही होना चाहिए और वह इससे दूर भाग रहा है, दूर होता जा रहा है। जिसका परिणाम आप देख ही रहे हैं और समझ ही रहे हैं।

धुनिया को किस बात की चिन्ता थी ? इतनी ज्यादा रूई है, इसे कौन धुन पाएगा और वह ऐसा सोचकर पागल हो गया, सनक गया। यहाँ आप भी विकास की दौड़ में लगे हैं। जिसे आप अपनी विकास की दौड़ कहते हैं। मुझे लगता है कि वह अंधी दौड़ है और जब आप उसमें शामिल हैं, तो बताने की जरूरत नहीं है कि आप विकास की जगह विनाश खोज रहे हैं, विनाश देख रहे हैं और विनाश पा रहे हैं। जबकि आपको करना क्या चाहिए ? आपको शान्तचित्त होकर, प्रकृतिस्थ होकर ईश्वर की दी हुई उस उदारता को पूरा करना चाहिए जो उसने आपके लिए छोड़ रखी है।"13

समीक्षात्मक लेख 'धरती पर धूल- कण खोजती वर्षा की बूँदें' के माध्यम से सर्वेन्द्र विक्रम सिंह कहते हैं कि - "हमारा भारत देश। हमारे भारत देश में जहाँ हरियाली का अखण्ड साम्राज्य था और जहाँ

सभी प्रकार के पक्षी तथा वन-पशु बिना रोक-टोक के विचरते तथा वास करते थे, जिसकी विशेषता को देखकर महाकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था— " सुजलां सुफलां मलयजशीतलाम् शस्यश्यामलां मातरम्" परन्तु अब स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण साहित्य, लिखने, पढ़ने या भाषणों में कहने-सुनने की वस्तु रह गया है। यथार्थ स्थिति बहुत भयावह है।लेकिन शिव नारायण सिंह एक समाज-सुधारक के रूप में पर्यावरण दूषित न हो, इसके लिए जो अनूठा प्रयास कर रहे हैं, वह भी अपने आप में अनुकरणीय है।"14

समीक्षात्मक लेख 'आँधियों के बीच एक दीया' के माध्यम से डॉ. प्रणय कृष्ण कहते हैं कि - "शिव नारायणजी की खूबी यह है कि उनके पास लोकजीवन में प्रचलित बोधकथाओं का विपुल भण्डार है, ग्रामीण और किसान जीवन के समृद्ध अनुभव हैं। गाँव में लोहार, कुम्हार आदि तमाम परम्परिक पेशों का अनुभव समृद्ध ज्ञान है, पशु-पक्षियों के प्रतीक पंचतंत्र से लेकर परम्परा से चली आई तमाम नीति-कथाएँ उनके लिए हस्तकमलवत हैं, कुशीनगर से आने के चलते बुद्ध की शिक्षाओं की अनेक प्रेरक कहानियाँ हैं।"15

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण जीवन की उत्तम व्यवस्थाओं का भी विलक्षण चित्रण करते हैं। उदाहरण के लिए 'नेकी-बदी' बोधकथा में वह ग्रामीण जीवन में पंच के सर्वमान्य होने की सुन्दर व्यवस्था का उल्लेख करते हुए कहते हैं- "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता जिसे आप मनुष्य में मनुष्यता की खोज कह सकते हैं। एक व्यक्ति कहीं जा रहा है। रास्ते में जंगल पड़ा और संयोग कुछ ऐसा कि वह जंगल पार कर चुका है। तभी झाड़ियों से आवाज आती है बचाओ ! बचाओ ! वह घूमकर देखता है तो झाड़ियों में आग की लपटें और उनके बीच फँसा एक सर्प, पहले तो थोड़ा डरा, किन्तु मनुष्यता ने ऊबाल मारा और उस व्यक्ति ने अपनी लाठी से उस सर्प को उठाया और ऊँचाई की ओर ऐसे उछाला कि वह लपटों के ऊपर से बाहर आ जाए।

ऐसा ही हुआ भी, सर्प पर लपटों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा किन्तु जब वह उस ऊँचाई से घिरा तो इस व्यक्ति के ऊपर ही गिर पड़ा। इस व्यक्ति की प्राथमिकता सर्प को अग्नि से सुरक्षित बाहर निकालना है। इसे क्या पता है कि वह इसके ऊपर ही आ गिरेगा। सर्प व्यक्ति के गले में पड़कर फूँफकारने लगा अब तो इस व्यक्ति को काटो तो खून नहीं। करे तो करे क्या ?

व्यक्ति ने सर्प से कहा यह क्या ? मैंने तुम्हारे प्राणों की रक्षा की। तुम्हें अग्नि से सुरक्षित बाहर निकाला। चाहता तो घसीटकर भी बाहर कर सकता था। तुम जल जाते। यूँ ही बिना तुम्हारी बात सुनें आगे बढ़ जाता तो तुम्हारा जीवन समाप्त हो जाता। सर्प ने कहा- अभी मेरा बड़प्पन समझो कि मैं केवल फुफकार ही रहा हूँ। मैं तुम्हें काट भी सकता हूँ। व्यक्ति ने कहा- यह क्या, मैंने तुम्हारे साथ नेकी की है और तुम मेरे साथ बदी करने पर तुले हो ? यह कैसा न्याय है ? तुम मेरे साथ अन्याय कर रहे हो।

सर्प ने कहा- यह कोई नई बात नहीं है यहाँ तो नेकी के बदले बदी ही होता है। तुम चाहो तो पंचायत करा लो जिसे चाहो पंच मानलो मैं तैयार हूँ। वहाँ दूर-दूर तक जब कोई जीव-जन्तु नहीं दिखा तो दोनों पास के एक बरगद के पेड़ को पंच स्वीकार कर उसके पास गए और अभिवादन कर कहे- हमारी एक समस्या है। आपको पंच मानते हुए हम दोनों अपनी बात रखते हैं।

बरगद ने कहा- ऐसी क्या समस्या है ? कहो ! दोनों ने पूर्व की सारी बात बतायी। फिर व्यक्ति ने कहा- क्या नेकी का बदला बदी ही होता है। बरगद ने कहा- हाँ नेकी का बदला बदी ही होता है। मनुष्य यही तो करता है। देखो अभी कुछ दिन पहले की बात है उधर से एक बारात निकली दोपहर का समय था। तेज धूप थी, सभी ने मेरी छाँव में दिन बिताया और जाते समय अपने हाथी-घोड़े और अन्य जानवरों के लिए मेरी डाल, टहनियाँ और पत्तों को काटकर मुझे बौना बना दिया। इसे क्या कहेंगे ? यही न कि नेकी के बदले बदी ही होता है। बरगद ने कहा- सर्प चाहे तो इस व्यक्ति को काट सकता है।

उस व्यक्ति ने कहा- नहीं यह सरासर अन्याय हैं। हमें किसी और पंच के सम्मुख अपनी बात रखनी चाहिए, फिर उस व्यक्ति ने इधर-उधर नजर दौड़ाई किन्तु कोई जीव-जन्तु दिखाई नहीं पड़ा। सर्प और व्यक्ति पंच की खोज करने आगे बढ़ना चाहते तब तक बरगद ने कहा- क्यों व्यर्थ में इधर-उधर पंच खोजते भटकोगे, क्यों नहीं सामने जो सरोवर है उसे ही पंच मानकर उससे अपनी बात कहो।

बात दोनों को समझ आती है और अब तीनों

बरगद, सर्प और वह व्यक्ति अभिवादन के साथ सरोवर से कहते हैं- हमारी एक गम्भीर समस्या है। आप पंच बनकर इसका निदान करने की कृपा करें। सरोवर ने कहा-ऐसी क्या समस्या आन पड़ी जो आप तीनों यहाँ उपस्थित हुए। व्यक्ति ने पुनः अब तक की सारी घटना से सरोवर को अवगत कराया और कहा- अब आप ही बताइए। नेकी के बदले बदी कहाँ तक उचित है।

सरोवर ने कहा- यहाँ नेकी के बदले बदी ही होता है। अतः यह उचित है। देखो न मनुष्य कितना स्वार्थी है। मैं उसके लिए क्या-क्या नहीं करता, रात-दिन एक करके अपने जल को शुद्ध बनाए रखता हूँ। मेरे ही जल से उसका जीवन चक्र चलता है। उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और वह है कि सदैव मेरे अस्तित्व को समाप्त करने में लगा रहता है। यहाँ नेकी का बदला बदी ही होता है, अतः सर्प चाहें तो इस व्यक्ति को काट सकता है।"16

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज में आज भी व्याप्त बुजुर्गों के सम्मान और उनकी विलक्षण बुद्धिमत्ता का भी उल्लेख करते हैं, 'पूर्ण समर्पण' कहानी में वह बुढ़िया माई का जिक्र करते हुए कहते हैं "प्रिय विद्यार्थियों, आज की कथा वार्ता एक बुढ़िया माई की है। बुढ़िया माई समझते हैं आप। अपने ही घर की बुजुर्ग महिलाओं को अन्य लोग बुढ़िया माई भी कहते हैं। हम लोग तो अपने रिश्ते से बुलाते हैं और अन्य लोग बुढ़िया माई कहते हैं। यहाँ हम लोग भी अन्य लोग ही हैं। इसलिए बुढ़िया माई ही कहेंगे।

अब बुढ़िया माई के बारे में कहा जाता है कि वह अपने पूरे जीवन में, अब तक के जीवन में, जैसा कि देखने में आया, आचार-विचार और व्यवहार में पूर्णतः सात्विक जीवन जीती हैं, आध्यात्मिक जीवन जीती हैं। वह अपना कोई भी कार्य, कोई भी कृत्य बिना ईश्वर को समर्पित किये नहीं करती। कुछ भी करना है तो भगवान को समर्पित करके ही करती हैं। सामान्यतः अपने भी घरों में ऐसा ही होता है।

भोजन बनता है। पहले भगवान को भोग लगता है। उसके बाद ही और लोग ग्रहण करते हैं। कभी आप जल्दी मचाते हैं न स्कूल जाने में देर हो रहा है, ऐसा है, वैसा है, तब भी आपको टिफिन नहीं दिया जाता है। भगवान को भोग लगाये बिना आपकी टिफिन नहीं भरी जाती है। कोई भी नया काम जो आप करते हैं, भगवत-भजन, पूजन से ही शुरू होता है। किन्तु जैसा कि मैंने बताया बुढ़िया माई के बारे में वह अपना सभी कृत्य ईश्वर को समर्पित करके करती हैं। अब सुबह-सुबह उनका काम आप जान ही रहे हैं। सुबह-सुबह पहला काम शुरू करती हैं झाड़ू लगाना। अब ये बुढ़िया माई कुछ ज्यादा ही फास्ट हैं। तीन बजे ही उठ जाती हैं। काम क्या है पूरा घर के अन्दर-बाहर झाड़ू करने के बाद क्या इकट्ठा होता है ? कूड़ा-कचरा न।

तब यह बुढ़िया माई जो कूड़ा-कचरा इकट्ठा करती हैं उसे ले जाती हैं घूरे पर फेंकने के लिए।

जब घूरे पर फेंकती हैं तो क्या कहती हैं मालूम है, हे ईश्वर ! हे प्रभु ! तेरा तुझको अर्पण। क्या कहती है, हे प्रभु ! हे ईश्वर ! तेरा तुझको अर्पण। जैसा हम सूर्य को अर्घ्य देते हैं वैसे ही तो कूड़ा भी फेंका जाता है। जिस भी बर्तन में रखें, चाहे खाँची में, चाहे बाल्टी में, तो फेंकते समय क्या कहती हैं हे प्रभु तेरा तुझको अर्पण।"17

इसी बोधकथा में आगे शिव नारायण सिंह विद्यार्थियों को समझाते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, लेकिन उतने से तो होना नहीं है, क्योंकि कचरा तो सभी फेंकते हैं कचरा भी है ? फेंकने वाला भी है और फेंका भी जा रहा है। एक दो नहीं लाखों लोग फेंक रहे हैं। तुम्हें भी फेंकने का मौका मिलेगा जाकर फेंकोगे। अब चाहे लाख बार कह लो, 'तेरा तुझको अर्पण' तेरा तुझको अर्पण, तेरा तुझको अर्पण, पहुँचेगा। अरे ! पहुँचना होता तो पहुँचता नहीं ? इतने लोगों का यहाँ है कहाँ पहुँच रहा, एकदम नहीं पहुँच रहा है।

केवल एक ही आदमी का पहुँच रहा है, बुढ़िया माई और फेंकने वाले लाखों करोड़ों हैं, उदाहरण दें तो लम्बा हो जायेगा। ऐसे ढ़ेर सारे उदाहरण पड़े हैं, बुद्ध से लेकर अब तक। सत्य यह है कि जो भी आप कृत्य कर रहे हैं, उस कृत्य में आप कितने समर्पित हैं और उस कृत्य के प्रति कितने समर्पित है। वह उतना आगे है या उसकी उतनी पहुँच है, वह वहाँ तक पहुँचा है।

आप पढ़ने आते हैं, निश्चित रूप से कुछ लोग वास्वत में पढ़ते हैं। कुछ लोग केवल पढ़ते है और कुछ की बात मैं नहीं करता क्योंकि उनके लिए मेरे पास शब्द नहीं है। कहना सुनना यह प्रक्रिया है लेकिन उसे आत्मसात् करना आपकी अपनी आवश्यकता है। कहीं-न-कहीं उसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए

आप यहाँ आये हैं और कर भी रहे हैं, करते रहिये। यही मार्ग है।"18

शिव नारायण सिंह अपनी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज की विद्वता और सत्संग के प्रति आदिकाल से चली आ रही आस्था का भी उल्लेख करते हैं। किसी भी समाज के विकास को समझने का एक पैमाना यह भी हो सकता है कि वह समाज अपने विद्वानों को कितना सम्मानित करता है। इस सन्दर्भ में 'मान-सम्मान' बोधकथा में शिव नारायण सिंह कहते हैं– "प्रिय विद्यार्थियों, किसी गाँव में एक बहुत पहुँचे हुए यूँ कह लीजिए कि बुद्ध पुरुष पहुँचे हुए थे। गाँव में उनका बड़ा सम्मान हो रहा था। लोग उन्हें तरह-तरह से पूजते और सेवा-सुश्रूषा में लगे रहते।

वे संतजी उस गाँव में पहले भी आ चुके थे। पूरे गाँव से उन्हें बहुत लगाव हो गया था, अब उनकी इच्छा हुई कि आज एक बार फिर गाँव को देखा जाय। चूँकि अब वे वृद्ध हो चले थे, पैदल चलकर गाँव घूम नहीं पाते। वह गाँव पहाड़ी पर बसा हुआ था। उन्हें गाँव दिखाने के लिए किसी साधन की आवश्यकता हुई। तब कुछ लोगों ने कहा कि कंधे पर उठा लेते हैं, किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ कहा। तब संतजी ने कहा कि नहीं, कोई और व्यवस्था करो।

गाँव पहाड़ी पर बसा है और कोई साधन मिला नहीं। उस गाँव में घोड़ा था ही नहीं, खच्चर खोजा गया तो कहीं बाहर जा चुका था। बचा कौन ? अब चूँकि वे संत थे, उनके लिए कोई बात नहीं थी, लेकिन आपको चढ़ाया जाता तब शायद दूसरी बात होती।

संतजी को जब सवारी पर चढ़ाकर पूरा गाँव घुमाया जा रहा था तो आप समझ ही रहे हैं कि जिस रास्ते से संत गुजरते लोग उनके ऊपर फूल बरसाते, उनकी जय-जयकार करते। कोई दूर से ही दण्डवत् हो जाता, लेट जाता, उन्हें प्रणाम करता। ढोल-मंजीरे बज ही रहे थे, गीत गाये जा रहे थे। उस वातावरण को देखकर लग रहा था जैसे स्वर्ग वहीं उतर आया हो।"19

अपने तरीके का एक नया काम' समीक्षात्मक लेख में यथार्थवादी समीक्षक डॉ. बलभद्र जी कहते हैं- "अपनत्व की परिभाषा है क्या? आपको नहीं लगता कि हम सभी लोग अपने हैं। क्या आप सभी के लिए यह भाव नहीं रख सकते? निश्चित ही शिव नारायण सिंह के विश्व बंधुत्व का यह पाठ सभी को पढ़ना होगा, चाहे शिव नारायण बाबू से पढ़े या स्वयं से, क्योंकि यही हमारी संस्कृति रही है। 'परो अहम् तनस्त' ऐसा हम नहीं मानते, हमने सबके मंगल की कामना की है। हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के पक्षधर हैं, हम सभी का भला चाहते हैं। हम सभी को अपने परिवार का सदस्य मानते हैं।"20

समीक्षात्मक लेख में 'बोधकथाएँ नवल उत्थान की ओर' में समीक्षा करते हुए उद्धव मिश्र जी कहते हैं- "अपनी कृति में व्यक्ति अपने विभिन्न रूपों में कहीं-न-कहीं उपस्थित होता है। इन उद्बोधन कथाओं के अचेतन में जो व्यक्ति खड़ा है, वह छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले के हिर्री माइन्स थाने के शासकीय आवास में पैदा होता है और वहीं की प्राकृतिक सुषमा में पला-बढ़ा होता है तथा जिस बाबा की गोद में लेटकर कहानियाँ सुनने का सान्निध्य प्राप्त होता है उस बाबा का गाँव है देवरिया जनपद में गण्डक नदी के किनारे का गाँव छपिया। इसीलिए वे परिचित हैं खेतों में होनेवाले खरपतवार से, यहाँ तक कि गुम्हीं, भटकोआ, गूम, भंगरईया और मकई के खेत में बननेवाले मचान से।

यही कारण है, उनके सपनों में छोटी गण्डक के किनारे बसा उनका गाँव छपिया है और उनके गाँव में रहने वाले चंद्रिका लोहार की भाथी है, धोबी और कुम्हार हैं, जिनके माध्यम से वे कथा बुनते हैं, ज्ञान और सूचना का एक-एक दाना चुनते हैं और कोशिश होती है विद्यार्थियों तक वैसे ही पहुँचा देने की, जैसे घोंसले में प्रतीक्षारत चूजे की चोंच में लाकर चिड़िया दाना रख देती है। वैसे ही कथाओं के माध्यम से वे अपनी बात रख देते हैं, बच्चों के दिलोदिमाग में।"21

निष्कर्ष– शिव नारायण सिंह जी की ग्रामीण जीवन पर आधारित बोधकथाओं का स्वरूप, ग्रामीण यथार्थ की बहुविध झलक दिखाता है। वास्तव में ग्रामीण कथा-साहित्य का लक्ष्य विशेष भू-भाग एवं वहाँ की जीवन-शैली प्रस्तुत करना होता है। इसके लिए कथाकार जिस महत्त्वपूर्ण पद्धति या प्रक्रिया को अपनाता है, वे ही ग्रामीण जीवन के तत्व माने जाते हैं। शिव नारायण सिंह की कथा-शैली जैसे इसे बहुत गूढ़ता से समझती है। भारत माता के ग्रामांचल के निवासी शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में कथानक का ग्राम्य आधार, लोक-संस्कृति का चित्रण, राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक

परिस्थितियों का चित्रण, भौगोलिक स्थिति तथा प्रकृति-चित्रण, पात्रों के चरित्र विकास में गाँवो का योगदान आदि प्रमुखता से उल्लेखित हैं। शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पात्रों और चरित्र चित्रण के माध्यम से ग्रामीण जीवन का समग्र यथार्थ चित्रित होता है और साथ ही संवाद एवं भाषा-शैली के आधार पर ग्रामीण भाषा एवं लोक संस्कृति का चित्रण होता है। अंततः शिव नारायण सिंह अपनी इन व्यापक और मर्मस्पर्शी बोधकथाओं के माध्यम से ग्रामीण जीवन के महत्त्व और वैभव को पुनर्स्थापित करने का महनीय कार्य करते हुए दिखाई देते हैं।

सन्दर्भ सूची–

1. केसर, डॉ. कीर्ति: स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी का समाज-सापेक्ष अध्ययन, पृष्ठ संख्या- 13
2. अवस्थी, देवी शंकरः साहित्यिक विधाओं की प्रकृति, पृष्ठ संख्या- 140-141
3. अवस्थी, देवी शंकरः साहित्यिक विधाओं की प्रकृति, पृष्ठ संख्या- 114
4. तिवारी, डॉ. नित्यानंद साहित्य का स्वरूप, पृष्ठ संख्या- 82
5. तिवारी, डॉ. नित्यानंद साहित्य का स्वरूप, पृष्ठ संख्या- 82-83
6. हिन्दी शब्दसागर, सम्पादक- श्यामसुन्दरदास, भाग- तीन, पृष्ठ संख्या- 1372
7. ग्रामीण साहित्य स्वरूप और समस्या, आनंद यादव, पृष्ठ संख्या- 1 से अनुदित
8. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 399 – 400
9. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 400
10. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 677 – 678
11. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 678 – 679
12. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 161 – 162
13. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से...', खण्ड 06, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 164 – 165
14. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 64
15. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 106
16. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 590 – 591
17. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 457 – 458
18. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... संचयन', प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 465 – 466
19. शिव नारायण सिंह, 'विद्यार्थियों से... खण्ड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, देवरिया, पृष्ठ संख्या – 204 – 205
20. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 154
21. मूल्यों के निर्माण कलश', प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 223